वेदोंकी संहिताएँ

	मू.	डा. व्य.
(१) ऋग्वेद (इसमें सर्वानुक्रम, देवतासूची, ऋषिसूची, मंत्रसूची आदि भी है।)	६)	१॥)
(२) यजुर्वेद (वाजसनेयि-संहिता)	३)	१॥)
(३) [यजुर्वेद] काण्व-संहिता	४)	॥।)
(४) ,, मैत्रायणी-संहिता	६)	१)
(५) ,, काठक-संहिता	६)	१)
(६) यजुर्वेद-सर्वानुक्रम सूत्र	१॥)	॥)
(७) यजुर्वेद वा० सं० पादसूची	१॥)	॥)
(८) ऋग्वेद-मंत्रसूची	२)	॥)

सामवेद कौथुमशाखीयः
ग्रामगेय (वेय प्रकृति) गानात्मकः
प्रथमः तथा द्वितीयो भागः

(१) इसके प्रारंभमें संस्कृत भूमिका है और पश्चात् '**प्रकृतिगान**' तथा '**आरण्यकगान**' है। **प्रकृतिगानमें आग्निपर्व** (१८१ गान) **ऐन्द्रपर्व** (६३३गान) तथा '**पवमानपर्व**' (३८४ गान) ये तीन पर्व और कुल ११९८ गान है। **आरण्यकगानमें अर्कपर्व** (८९ गान), **द्वन्द्वपर्व** (७७ गान), **शुक्रियपर्व** (८४ गान), **और वाचोव्रतपर्व** (४० गान) ये चार पर्व और कुल (२९० गान) है।

इसमें पृष्ठके प्रारंभमें ऋग्वेद-मंत्र है आर सामवेदका मंत्र है और पश्चात् गान है। इसके पृष्ठ ४३४ और मूल्य ६) रु० तथा डा. व्य. ॥।) रु. है।

(२)

उपर्युक्त पुस्तक केवल गान मात्र छपा है। उसके पृष्ठ २८४ और मूल्य ४) रु. तथा डा. व्य. ॥) रु. है।

मंत्री- स्वाध्याय-मण्डल, 'आनन्दाश्रम' किल्ला-पारडी (जि. सूरत)

अंक १७

संस्कृत-पाठ-माला ।

(संस्कृत-भाषाका अध्ययन करनेका सुगम उपाय)

सप्तदशो भागः ।

लेखक

पं. श्रीपाद दामोदर सातवळेकर

अध्यक्ष - स्वाध्यायमंडल,

अष्टम वार

संवत् २००७, शक १८७२, सन १९५१

संस्कृतके क्रियापदोंका विशेष विचार !

पूर्व विभागोंमें संस्कृतके क्रियापदोंका विचार समाप्त हो चुका है। परंतु यह क्रियापदविचार अन्य विचारोंकी अपेक्षा कुछ कठिन होनेसे इसको संक्षिप्त रीतिसे परंतु अति सुबोध रीतिसे इस विभागमें पुनः बतानेका उद्देश्य है, जिससे पाठकोंको यह क्रियापद-विचार ठीक प्रकार समझमें आ सके।

आशा है कि पाठक इससे लाभ उठावेंगे।

स्वाध्याय-मण्डल
' आनंदाश्रम '
किल्ला-पारडी (जि० सूरत)

लेखक
श्रीपाद दामोदर सातवलेकर

मुद्रक और प्रकाशक- व. श्री. सातवलेकर बी. ए.
भारत-मुद्रणालय, ' आनंदाश्रम ' किल्ला-पारडी (जि० सूरत)

ॐ

संस्कृत–पाठ–माला ।

सप्तदशो भागः ।

पाठ १

वर्तमानकाल । (लट्)

इस समयतकके अभ्याससे पाठक धातुओंके दसों गणोंके वर्तमान, भूत, भविष्य आदिके रूप बना सकते हैं, तथापि यहां इन्हीं रूपोंको सुगमतापूर्वक बनानेका विधि पुनः बताना है। पाठक जानते ही हैं कि धातुओंके दस गण हैं और प्रत्येक धातुके वर्तमान (लट्) आदिके दस रूप होते हैं। इन दस लट् आदि लकारोंमें गणचिन्होंसे युक्त होनेवाले लकार ये हैं:—

१ लट् (वर्तमान)	... ...	बोधति ।
२ लोट् (आज्ञार्थ)	... ...	बोधतु ।
३ लङ् (अनद्यतन–भूतकाल)	... ...	अबोधत् ।
४ (विधि) लिङ् (विध्यर्थ)	... —	बोधेत् ।

अन्य छः लकारोंका गणोंके साथ विशेष संबंध नहीं है। अर्थात् प्रायः अन्य सब लकारोंके रूप सब गणोंके धातुओंके समानतया ही होते हैं। देखिये—

*

५ लिट् (अनद्यतन-परोक्षभूत) ... ... बुबोध ।
६ लुट् (अनद्यतन-भविष्य) ... ... बोधिता ।
७ लृट् (भविष्यकाल) ... ... बोधिष्यति ।
८ लेट् (वैदिक)
आशीर्लिङ् (आशीर्वादार्थ) ... ... बुध्यात् ।
९ लुङ् (भूतकाल) ... ... अबुधत् ।
१० लृङ् (हेतुहेतुमद्भावार्थ) ... ... अबोधिष्यत् ।

आशीर्लिङ् पूर्वोक्त विधिलिङ्से संबद्ध है और लेट् केवल वेदमें ही आता है, इसलिये उनके रूप बनाने नहीं हैं। वेदमें उनके रूप हैं वे वहीं देखने हैं। इसलिये इसके रूप बनानेकी विधि जाननेकी कोई आवश्यकता नहीं है । अस्तु ।

पाठक यहां स्मरण रखें कि (१) लट्, (२) लोट्, (३) लङ् और (४) विधिलिङ् इन चार लकारोंमें ही गणोंके चिन्ह लगते हैं, शेष छः लकारोंके रूपोंमें उन गणचिन्होंका कोई संबंध नहीं है। इतना स्मरण रखनेसे बहुतसा रूप बनानेका कष्ट कम हो जायगा। अब वर्तमानकालके प्रत्यय देखिये—

वर्तमानकालके परस्मैपदी प्रत्यय ।

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
१ प्रथम पुरुष	...ति	...तः	... अन्ति
२ मध्यम ,,	...सि	...थः	... थ
३ उत्तम ,,	...आमि	...आवः	... आमः

ये प्रत्यय सब गणोंके परस्मैपदी वर्तमानकालके लिये समान ही हैं देखिये—

'बुध्' धातु =	बोध-ति	बोध-तः	बोधन्ति ।
	बोध-सि	बोध-थः	बोध-थ ।
	बोधामि	बोधावः	बोधामः ।

इसी प्रकार हरएक गणके धातुओंसे गणचिन्ह लगाकर ये प्रत्यय लगाये जायँ, तो उसके वर्तमानकालके रूप बनते हैं। इस नियमको ध्यान-में धरनेसे पाठक हरएक धातुके वर्तमानकालके रूप विना आयास बना सकते हैं, देखिये—

१ प्रथमगण— (गणचिन्ह 'अ') = भू (भव्) = होना।

१ भवति, भवतः, भवन्ति। २ भवसि, भवथः, भवथ।
३ भवामि, भवावः, भवामः॥

२ द्वितीयगण- (गणचिन्ह कुछ नहीं है) = पा = रक्षण करना।

पाति, पातः, पान्ति। २ पासि, पाथः, पाथ।
३ पामि, पावः, पामः॥

३ तृतीयगण- (गणचिन्ह नहीं है, परंतु धातुका प्रथमाक्षर दुहराया जाता है) = दा = देना।

१ ददाति, दत्तः, ददति। २ ददासि, दत्थः, दत्थ।
३ ददामि, दद्वः, दद्मः॥

४ चतुर्थगण-(गणचिन्ह 'य') = क्रुध् = क्रोध करना।

१ क्रुध्यति, क्रुध्यतः, क्रुध्यन्ति। २ क्रुध्यसि, क्रुध्यथः, क्रुध्यथ। ३ क्रुध्यामि, क्रुध्यावः, क्रुध्यामः॥

५ पंचमगण- (गणचिन्ह 'नु') = सु = रस निकालना।

१ सुनोति, सुनुतः, सुन्वन्ति। २ सुनोषि, सुनुथः, सुनुथ।
३ सुनोमि, सुनुवः, सुनुमः॥

६ षष्ठगण- (गणचिन्ह 'अ') = चल् = चलना।

१ चलति, चलतः, चलन्ति। २ चलसि, चलथः, चलथ।
३ चलामि, चलावः, चलामः॥

७ सप्तमगण- (गणचिन्ह 'न') यह चिन्ह धातुके बीचमें घुसता है। हिंस् = हिंसा करना।

१ हिनस्ति, हिंस्तः, हिंसन्ति। २ हिनस्सि, हिंस्थः,

हिंस्थ । ३ हिनस्मि, हिंस्वः, हिंस्मः ॥

८ अष्टमगण– (गणचिन्ह 'उ') तन् = फैलाना ।

१ तनोति, तनुतः, तन्वन्ति । २ तनोषि, तनुथः, तनुथ ।

३ तनोमि, तनुवः, तनुमः ॥

९ नवमगण– (गणचिन्ह 'ना') = बंध् = बांधना ।

१ बध्नाति, बध्नीतः, बध्नन्ति । २ बध्नासि, बध्नीथः,

बध्नीथ । ३ बध्नामि, बध्नीवः, बध्नीमः ॥

१० दशमगण– (गणचिन्ह 'अय') = चुर् = चोरना ।

१ चोरयति, चोरयतः, चोरयन्ति । २ चोरयसि, चोरयथः,

चोरयथ । ३ चोरयामि, चोरयावः, चोरयामः ॥

देखिये, इस युक्तिसे पाठक सब गणोंके धातुओंके वर्तमानकालके परस्मैपदी रूप बना सकते हैं । सब धातुओंके लिये एकसे ही प्रत्यय हैं केवल गणचिन्होंका भेद है । इस प्रकार सुगमतासे धातुओंके रूप बनाइये ।

संस्कृत–वाक्यानि ।

स यत्कथयति तदहं बोधामि । यद्भवति तद्भवतु । ईश्वरः सकलं जगत्पाति । देवदत्तः यज्ञेश्वराय प्रभूतं धनं ददाति । यः पुरुषः क्रुध्यति स कथं मनसः शान्तिं लभेत ? ऋत्विजः यज्ञे सोमं सुन्वन्ति । त्वं कुत्र चलसि ? व्याघ्रः अजं हिनस्ति । त्वं तत्र किं तनोषि ? रश्मिना तमहं बध्नामि । चोरः धनं चोरयति ।

पाठ २

वर्तमानकालके आत्मनेपदी प्रत्यय।

पूर्व पाठमें वर्तमानकालके परस्मैपदी प्रत्यय बताये हैं; अब इस पाठमें वर्तमानकालके आत्मनेपदी प्रत्यय बताये जाते हैं।

(१)

वर्तमानकालके आत्मनेपद।

(प्रथम, चतुर्थ, षष्ठ और दशमगणके लिये)

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
१ प्रथम पुरुष	...ते	...इते	...अन्ते
२ मध्यम ,,	...से	...इथे	...ध्वे
३ उत्तम ,,	...ई	...आवहे	...आमहे

ये प्रत्यय पूर्वोक्त रीतिसे ही धातुओंको लगकर आत्मनेपदी रूप बनते हैं। प्रथम धातु, उसके पश्चात् गणोंका चिन्ह और पश्चात् ये प्रत्यय लगानेसे धातुओंके आत्मनेपदी रूप सब गणोंके बन सकते हैं, जैसे—

प्रथमगण (गणचिन्ह 'अ')

नी (नय्) लेजाना = १ नय-ते, नये-ते, नयन्ते। २ नय-से, नये-थे नय-ध्वे। ३ नये, नयावहे, नया-महे॥

चतुर्थगण (चिन्ह 'य')

युध् = लडना = १ युध्यते, युध्येते, युध्यन्ते। २ युध्यसे, युध्येथे, युध्यध्वे। ३ युध्ये, युध्यावहे, युध्यामहे॥

षष्ठगण (चिन्ह 'अ')

क्षिप् = फेंकना = १ क्षिपते, क्षिपेते, क्षिपन्ते। २ क्षिपसे, क्षिपेथे, क्षिपध्वे। ३ क्षिपे, क्षिपावहे, क्षिपामहे॥

दशमगण (चिन्ह 'अय')

चूर्ण् = चूरण करना = १ चूर्णयते, चूर्णयेते, चूर्णयन्ते। २ चूर्णयसे, चूर्णयेथे, चूर्णयध्वे। ३ चूर्णये, चूर्णयावहे, चूर्णयामहे॥

इस प्रकार इन चार गणोंके धातुओंके रूप होते हैं। शेष छः गणोंके अर्थात् द्वितीय, तृतीय, पञ्चम, सप्तम, अष्टम और नवम गणोंके धातुओंके लिये निम्नलिखित प्रत्यय हैं—

वर्तमानकाल, आत्मनेपदी प्रत्यय

	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
१ प्र० पु०	...ते	...आते	...अते
२ म० पु०	...से	...आथे	...ध्वे
३ उ० पु०	...ए	...वहे	...महे

पूर्वोक्त प्रत्ययोंमें और इनमें थोडासा ही फरक है। पूर्व प्रत्ययोंमें इकारके स्थानपर यहां " आ " है, तथा अन्य भी थोडासा भेद है। ये प्रत्यय द्वितीयगणसे आगे सब गणोंके लिये बडे उपयोगी हैं, जैसा—

द्वितीयगण (चिन्ह नहीं है)

आस् = बैठना = १ आस्ते, आसाते, आसते। २ आस्से, आसाथे, आध्वे। आसे, आस्वहे, आस्महे ॥

तृतीयगण (चिन्ह-धातुके आद्याक्षरका द्वित्व)

धा = धारण करना = १ धत्ते, दधाते, दधते। २ धत्से, दधाथे, धद्ध्वे। ३ दधे, दध्वहे, दध्महे ॥

पंचमगण (चिन्ह ' नु ')

अश् = व्यापना = १ अश्नुते, अश्नुवाते, अश्नुवते। २ अश्नुषे, अश्नुवाथे, अश्नुध्वे। ३ अश्नुवे, अश्नुवहे, अश्नुमहे ॥

सप्तमगण (चिन्ह ' न ')

युज् = जोडना = १ युङ्क्ते, युञ्जाते, युञ्जते। युङ्क्षे, युञ्जाथे, युङ्ध्वे। ३ युञ्जे, युञ्ज्वहे, युञ्ज्महे ॥

अष्टमगण (चिन्ह ' उ ')

कृ = करना = १ कुरुते, कुर्वाते, कुर्वते। कुरुषे, कुर्वाथे, कुरुध्वे। ३ कुर्वे, कुर्वहे, कुर्महे ॥

नवमगण (चिन्ह 'ना')

क्री = क्रय करना = १ क्रीणीते, क्रीणाते, क्रीणते । २ क्रीणीषे, क्रीणाथे, क्रीणीध्वे । ३ क्रीणे, क्रीणीवहे, क्रीणीमहे ॥

पाठक यहां अनुभव करें कि प्रथम, चतुर्थ, षष्ठ और दशम गणके धातुओंके प्रत्ययोंकी आपसमें किस विषयमें समानता है। और शेष छः गणोंके प्रत्ययोंकी किस विषयमें समता है। यदि पाठक इन बातोंको ठीक प्रकार ध्यानमें रखेंगे तो वर्तमानकालके परस्मैपदी और आत्मनेपदी धातुओंके रूप बनाना उनके लिये कोई कठिन बात नहीं होगी।

संस्कृत-वाक्यानि।

सैनिकाः समरभूम्यां शस्त्राणि नयन्ते। वयं तत्र जलं नयामहे। राजा किमर्थमेवं क्रुध्यते? अहं कदापि न क्रुध्ये। स जले प्रस्तरान् क्षिपते। त्वं भूमौ किं क्षिपसे? स वैद्यः काष्ठानि भैषजार्थं चूर्णयते। स तत्राऽऽस्ते। वयं अत्राऽऽस्महे। त्वं बहुमूल्यं ऊर्णावस्त्रं धत्से। आत्मा शरीरं धत्ते। ईशः सर्वत्राश्नुते। योगी मनः युङ्क्ते। अहं मनः युञ्जे। कर्मकारः कर्म कुरुते। इदानीमहं न किमपि कुर्वे। स धनेन धान्यं क्रीणीते।

पाठ ३

(लोट्) आज्ञार्थ

प्रथम, चतुर्थ, षष्ठ और दशमगणके परस्मैपदी धातुओंके लिये (लोट्) आज्ञार्थके प्रत्यय ये हैं—

	एक०	द्वि०	बहु०
१ प्र० पु०	...तु	...ताम्	...अन्तु
२ म० पु०	...०	...तम्	...त
३ उ० पु०	...आनि	...आव	...आम

धातु, गणचिन्ह और ये प्रत्यय मिलकर उक्त चार गणोंके आज्ञार्थके परस्मैपदी रूप होते हैं, देखिये—

प्रथमगण (चिन्ह 'अ')

नी = (नय्) ले जाना = १ नयतु, नयताम्, नयन्तु । २ नय, नयतम्, नयत । ३ नयानि, नयाव, नयाम ॥

चतुर्थगण (चिन्ह 'य')

तुष् = संतुष्ट होना = १ तुष्यतु, तुष्यताम्, तुष्यन्तु । २ तुष्य, तुष्यतम्, तुष्यत । ३ तुष्यानि, तुष्याव, तुष्याम ॥

षष्ठगण (चिन्ह 'अ')

चल् = चलना = १ चलतु, चलताम्, चलन्तु । २ चल, चलतम्, चलत । ३ चलानि, चलाव, चलाम ॥

दशमगण (चिन्ह 'अय')

तड् = ताडन करना = १ ताडयतु, ताडयताम्, ताडयन्तु । २ ताडय, ताडयतम्, ताडयत । ३ ताडयानि, ताडयाव, ताडयाम ॥

इस प्रकार प्रथम, चतुर्थ, षष्ठ और दशम गणके परस्मैपदी आज्ञार्थके रूप होते हैं, अब अन्य छः गणोंके आज्ञार्थके प्रत्यय देखिये—

	एक०	द्वि०	बहु०
१ प्र० पु०	...तु	...ताम्	...अन्तु
२ म० पु	...हि	...तम्	...त
३ उ० पु०	...आनि	...आव	...आम

केवल द्वितीय पुरुष एकवचनमें जहां कुछ भी प्रत्यय नहीं था, वहां " हि " प्रत्यय यहां है, इतना ही भेद है अन्य प्रत्यय पूर्ववत् ही हैं, देखिये इनके रूप—

द्वितीयगण (चिन्ह नहीं)

अद् = खाना = १ अत्तु, अत्ताम्, अदन्तु । २ अद्धि, अत्तम्, अत्त । ३ अदानि, अदाव, अदाम ॥

तृतीयगण (आद्याक्षरका द्वित्व)

दा = देना = १ ददातु, दत्ताम्, ददतु। २ देहि, दत्तम्, दत्त। ३ ददानि, ददाव, ददाम॥

पंचमगण (नु)

साध् = सिद्ध करना = साध्नोतु, साध्नुताम्, साध्नुवन्तु। २ साध्नुहि, साध्नुतम्, साध्नुत। ३ साध्नवानि, साध्नवाव, साध्नवाम॥

सप्तमगण (न)

युज् = संयुक्त होना = १ युनक्तु, युङ्क्ताम्, युञ्जन्तु। २ युङ्ग्धि, युङ्क्तम्, युङ्क्त। ३ युनजानि, युनजाव, युनजाम॥

अष्टमगण (उ)

कृ = करना = १ करोतु, कुरुताम्, कुर्वन्तु। २ कुरु, कुरुतम्, कुरुत। ३ करवाणि, करवाव, करवाम॥

[नियम- "उ" कारके पश्चात् आनेवाले "हि" प्रत्ययका लोप होता है, इस नियमके अनुसार "कुरुहि" न बना, परंतु "कुरु" ऐसाही रूप हुआ।]

नवमगण (ना)

क्री = क्रय करना = १ क्रीणातु, क्रीणीताम्, क्रीणन्तु। २ क्रीणीहि, क्रीणीतम्, क्रीणीत। ३ क्रीणानि, क्रीणाव, क्रीणाम॥

इस रीतिसे दसों गणोंके आज्ञार्थके परस्मैपदी रूप बनते हैं अब आत्मनेपदी रूप बनानेकी रीति देखिये—

आज्ञार्थके आत्मनेपदी प्रत्यय।

१ प्र० पु०	...ताम्	...इताम्	...अन्ताम्
२ म० पु०	...स्व	...इथाम्	...ध्वम्
३ उ० पु०	...ऐ	....आवहै	...आमहै

प्रथम, चतुर्थ, षष्ठ और दशमगणके आत्मनेपदी धातुओंके लिये ये प्रत्यय हैं। देखिये—

प्रथमगण (अ)

बुध् = (जानना) = १ बोधताम्, बोधेताम्, बोधन्ताम्। २ बोधस्व, बोधेथाम्, बोधध्वम्। ३ बोधै, बोधावहै, बोधामहै ॥

चतुर्थगण (य)

शुच् = (शुद्ध होना) = १ शुच्यताम्, शुच्येताम्, शुच्यन्ताम्। २ शुच्यस्व, शुच्येथाम्, शुच्यध्वम्। ३ शुच्यै, शुच्यावहै, शुच्यामहै ॥

षष्ठगण (अ)

क्षिप् = (फेंकना) = १ क्षिपताम्, क्षिपेताम्, क्षिपन्ताम्। २ क्षिपस्व, क्षिपेथाम्, क्षिपध्वम्। ३ क्षिपै, क्षिपावहै, क्षिपामहै ॥

अन्य गणोंके लिये आत्मनेपदी आज्ञार्थके प्रत्यय निम्नप्रकार होते हैं—

	एक०	द्वि०	बहु०
१ प्र० पु०	...ताम्	...आताम्	...अताम्
२ म० पु०	...स्व	...आथाम्	...ध्वम्
३ उ० पु०	...ऐ	...आवहै	...आमहै।

पूर्वोक्त प्रत्ययोंमें और इनमें फरक इतना ही है कि पूर्व प्रत्ययोंके " इ " के स्थानपर यहां " आ " है और " अन्ताम् " प्रत्ययके स्थानपर यहां केवल " अताम् " है, देखिये इनके रूप—

द्वितीयगण (०)

ईड् = (स्तुति करना) = १ ईट्टाम्, ईडाताम्, ईडताम्। २ ईड्ष्व ईडाथाम्, ईड्ध्वम्। ३ ईडै, ईडावहै, ईडामहै ॥

तृतीयगण (धातुके आद्याक्षरका द्वित्व)

भृ = (धारण करना) = १ बिभृताम्, बिभ्राताम्, बिभ्रताम्। २ बिभृष्व, बिभ्राथाम्, बिभृध्वम्। ३ बिभरै, बिभरावहै, बिभरामहै ॥

पंचमगण (नु)

सु = (रस निकालना) = १ सुनुताम्, सुन्वाताम्, सुन्वताम् । २ सुनुष्व, सुन्वाथाम्, सुनुध्वम् । ३ सुनवै, सुनवावहै, सुनवामहै ॥

सप्तमगण (न)

इन्ध् = (जलना) = १ इन्धाम्, इन्धाताम्, इन्धताम् । २ इन्त्स्व, इन्धाथाम्, इन्ध्वम्, । ३ इनधै, इनधावहै, इनधामहै ॥

अष्टमगण (उ)

कृ = (करना) = १ कुरुताम्, कुर्वाताम्, कुर्वताम् । २ कुरुष्व, कुर्वाथाम्, कुरुध्वम् । ३ करवै, करवावहै, करवामहै ॥

नवमगण (ना)

क्री = (क्रय करना) = १ क्रीणीताम्, क्रीणाताम्, क्रीणताम् । २ क्रीणीष्व, क्रीणाथाम्, क्रीणीध्वम् । ३ क्रीणै, क्रीणावहै, क्रीणामहै ॥

इस प्रकार आज्ञार्थके रूप बनते हैं । केवल प्रत्यय ध्यानमें रखनेसे रूप, पहचाने जा सकते हैं ।

संस्कृत-वाक्यानि

पक्षिणः पत्राणि नयन्तु । त्वं अनेनान्नेन तुष्य । सर्वेऽश्वा अद्यैव शीघ्रं चलन्तु । अहं चलानि किम् ? तं बिडालं मा ताडय, परंतु तं श्वानं अधुनैव ताडय ।

अत्रत्याः सर्वेऽपि मानवाः यद्यद्रोचते तत्तदन्नमदन्तु । त्वं किमपि मा अद्धि । यः धनं याचकेभ्यो ददाति स ददातु । त्वं मह्यं वस्त्रं देहि । अहं तुभ्यं किं ददानि ?

योगी मनः तत्र युनक्तु । त्वमपि तथैव स्वकीयं मनः युङ्ग्धि । सर्वे छात्राः स्वकीयबलवृद्ध्यर्थं व्यायामं कुर्वन्तु । त्वं तु सायंप्रातः यथा स व्यायामं करोति तथैव कुरु ।

यदहं वदामि तत्त्वं बोधस्व । सोऽपि बोधताम् । ईश्वरं आत्मशुद्ध्यर्थं ईडिष्व । सर्वे शिष्याः स्वकीयानि वस्त्राणि बिभ्रताम् । त्वं यज्ञे सोमं

सुनुष्व । अग्निं त्वं इन्त्स्व ।

(लिङ्) अनद्यतनभूत (अपूर्ण-भूत)

परस्मैपदके प्रत्यय ।

	एक०	द्वि०	बहु०
१	...त्	...ताम्	...अन्
२	...स् (:)	...तम्	...त
३	...अम्	...व	...म

(लङ्) अनद्यतन भूतके रूप बनानेके समय धातुके पूर्व "अ" लगता है । देखिये—

प्रथमगण (अ)

नी (नय्) ले जाना = १ अनयत्, अनयताम्, अनयन् । २ अनयः, अनयतम्, अनयत । ३ अनयम्, अनयाव, अनयाम ॥

चतुर्थगण (य)

कुप् = (क्रोध करना) = १ अकुप्यत्, अकुप्यताम्, अकुप्यन् । २ अकुप्यः, अकुप्यतम्, अकुप्यत । ३ अकुप्यम्, अकुप्याव, अकुप्याम ॥

षष्ठगण (अ)

गुंफ् = (माला करना) = १अगुम्फत्, अगुम्फताम्, अगुम्फन् । २ अगुम्फः, अगुम्फतम्, अगुम्फत, । ३ अगुम्फम्, अगुम्फाव, अगुम्फाम ॥

दशमगण (अय)

चर्व् = (चबाना) = अचर्वयत्, अचर्वयताम्, अचर्वयन् । २ अचर्वयः, अचर्वयतम्, अचर्वयत । ३ अचर्वयम्, अचर्वयाव, अचर्वयाम ॥

द्वितीयगण (०)

ख्या = (कहना) १ = अख्यात्, अख्याताम्, अख्यन् (अख्युः) । २ अख्याः, अख्यातम्, अख्यात । ३ अख्याम्, अख्याव, अख्याम ॥

तृतीयगण (द्वित्व)

दा = (देना) = १ अददात्, अदत्ताम्, अददुः । २ अददाः, अदत्तम्,

अदत्त । ३ अददाम्, अदद्व, अदद्म ॥

पंचमगण (नु)

साध् = (सिद्ध करना) = १ असाध्नोत्, असाध्नुताम्, असाध्नुवन् । २ असाध्नोः, असाध्नुतम्, असाध्नुत । ३ असाध्नवम्, असाध्नुव, असाध्नुम ॥

सप्तमगण (न)

पिष् = (चूर्ण करना) = १ अपिनट्, अपिंष्टाम्, अपिंषन् । २ अपिनट्, अपिंष्टम्, अपिंष्ट । ३ अपिनषम्, अपिंष्व, अपिंष्म ॥

अष्टमगण (उ)

तन् = (फैलाना) = १ अतनोत्, अतनुताम्, अतन्वन् । २ अतनोः, अतनुतम्, अतनुत । ३ अतनवम्, अतनुव, अतनुम ॥

नवमगण (ना)

क्री = (क्रय करना) = १ अक्रीणात्, अक्रीणीताम्, अक्रीणन् । २ अक्रीणाः, अक्रीणीतम्, अक्रीणीत । ३ अक्रीणाम्, अक्रीणीव, अक्रीणीम ॥

इस रीतिसे परस्मैपदी संपूर्ण धातुओंके अनद्यतनभूत (लिङ्) के रूप बनानेके एक ही प्रत्यय हैं और प्रायः सभी धातुओंके रूप एक ही नियमसे बनते हैं । धातुके पूर्व " अ " उसके पश्चात् धातु उसके अनंतर गणका चिन्ह और उसके पश्चात् लङ्का प्रत्यय लगता है; सब धातुओंके लिये एक ही प्रत्यय होनेके कारण ये रूप सुगम हैं । अब लिङ् के आत्मनेपदी रूप देखिये—

(लिङ्) अनद्यतनभूत

आत्मनेपदी प्रत्यय

	एक०	द्वि०	बहु०
१ प्र० पु०	...त	...इताम्	...अन्त
२ म० पु०	...थाः	...इथाम्	...ध्वम्
३ उ० पु०	...इ	...वहि	...महि

पूर्वोक्त रीतिसे धातुके " अ " पश्चात् धातु, बाद गणचिन्ह और अंतमें प्रत्यय लगता है। अ + धातु + गणचिन्ह + लङ्का प्रत्यय इस प्रकार रूप बनता है, देखिये इनके रूप—

प्रथमगण

बुध् = (जानना) = १ अबोधत, अबोधेताम्, अबोधन्त। २ अबोधथाः, अबोधेथाम्, अबोधध्वम्। ३ अबोधे, अबोधावहि, अबोधामहि ॥

चतुर्थगण (य)

शुच् = (शुद्ध होना) = १ अशुच्यत, अशुच्येताम्, अशुच्यन्त। २ अशुच्यथाः, अशुच्येथाम्, अशुच्यध्वम्। ३ अशुच्ये, अशुच्यावहि, अशुच्यामहि।

षष्ठगण (अ)

क्षिप् = (फेंकना)= १ अक्षिपत, अक्षिपेताम्, अक्षिपन्त। २ अक्षिपथाः, अक्षिपेथाम्, अक्षिपध्वम्। ३ अक्षिपे, अक्षिपावहि, अक्षिपामहि ॥

दशमगण (अय)

गण् = (गिनना) = १ अगणयत, अगणयेताम्, अगणयन्त। २ अगणयथाः, अगणयेथाम्, अगणयध्वम्। ३ अगणये, अगणयावहि, अगणयामहि ॥

अन्य गणोंके रूपोंके लिये पूर्वोक्त प्रत्ययोंके " इताम् और इथाम् " के स्थानपर " आथाम् और आताम् " समझिये। अब इनके रूप बनाइये—

द्वितीयगण (०)

आस् = (बैठना) = १ आस्त, आसाताम्, आसत। २ आस्थाः, आसाथाम्, आध्वम्। ३ आसि, आस्वहि, आस्महि ॥

तृतीयगण (द्वित्व)

दा = (देना) = १ अदत्त, अददाताम्, अददत। २ अदत्थाः, अददाथाम्, अदद्ध्वम्। ३ अददि, अदद्वहि, अदद्महि ॥

पंचमगण (नु)

सु (रस निकालना) = १ असुनुत, असुन्वाताम्, असुन्वत । २ असुनुथाः, असुन्वाथाम्, असुनुध्वम् । ३ असुन्वि, असुनुवहि, असुनुमहि ॥

सप्तमगण (न)

युज् (युक्त होना) = १ अयुङ्क्त, अयुञ्जाताम्, अयुञ्जत । २ अयुङ्क्थाः, अयुञ्जाथाम्, अयुङ्ग्ध्वम् । ३ अयुञ्जि, अयुञ्ज्वहि, अयुञ्ज्महि ॥

अष्टमगण (उ)

तन् (फैलाना) = १ अतनुत, अतन्वाताम्, अतन्वत । २ अतनुथाः, अतन्वाथाम्, अतनुध्वम् । ३ अतन्वि, अतनुवहि, अतनुमहि ॥

नवमगण (ना)

क्री (क्रय करना) = १ अक्रीणीत, अक्रीणाताम्, अक्रीणत । २ अक्रीणीथाः, अक्रीणाथाम्, अक्रीणीध्वम् । ३ अक्रीणि, अक्रीणीवहि, अक्रीणीमहि ॥

इस प्रकार अनद्यतनभूतके रूप होते हैं । परस्मैपदी और आत्मनेपदी ले दोनों रूप बनानेकी रीति यहां पाठक देखें और ध्यानमें रखें । इससे ाको ये रूप बनाना सुगम होगा । कई धातुओंकी कुछ विशेषताएं भी ती हैं, परंतु यहां विशेषताओंका उल्लेख करना नहीं है, परंतु सर्वसाधारण यम ही बताना है ।

संस्कृत--वाक्यानि ।

यदाऽहं तवाश्वं तत्रानयं तदा त्वं कुत्र गतः ? यदा सः अकुप्यत्तदा किमकरोः ? यदा तव पुत्री पुष्पाणां माला अगुम्फत् तदा स कुत्र गतः ? ा त्वमन्नमचर्वयस्तदा त्वं जलं किं नापिबः ? स त्वां तदा किमवदत् ? तदा तस्मै किमददाः ? तेन कर्मणा ते सर्वे पुरुषाः किमसाध्नुवन् ? ाऽहं सर्वाणि भेषजानि सम्यक्तयाऽपिनषम् तदा त्वया तत्र जलं किं

नानीतम् ? युद्धेन स्वकीयं यशः सर्वासु दिक्षु स वीरोऽतनोत् । तदा गा कोऽक्रीणात् ?

त्वमबोधथाः किं यन्मया कथितम् ? यदा स अक्षुभ्यत तदा त्वया किं कृतम् ? कस्तत्र तदक्षिपत ? किमर्थं त्वमेवं तदक्षिपः ? त्वमगणयथाः किम् ? अहं नागणये । स तत्रास्त । अहं छात्राय पुस्तकमददि । स सोममसुनुत योगी परमात्मनि मनः अयुङ्क्त । स तत्र वस्त्रं नातनुत । स वणिक्तत्र नाक्रीणीत ।

पाठ ४

विध्यर्थ (विधिलिङ्)

विधिलिङ् के परस्मैपदी धातुओंके प्रत्यय निम्नलिखित हैं—

विधिलिङ्-परस्मैपदी प्रत्यय ।

१	...ईत्	...ईताम्	...ईयुः
२	...ईः	...ईतम्	...ईत
३	...ईयम्	...ईव	...ईम

प्रथमगण (अ)

बुध् (जानना) = १ बोधेत्, बोधेताम्, बोधेयुः । २ बोधेः, बोधेतम् बोधेत । ३ बोधेयम्, बोधेव, बोधेम ॥

चतुर्थगण (य)

कुप् (क्रोध करना) = १ कुप्येत्, कुप्येताम् कुप्येयुः । २ कुप्येः कुप्येतम्, कुप्येत । ३ कुप्येयम्, कुप्येव, कुप्येम ॥

षष्ठगण (अ)

क्षिप् (फेंकना) = १ क्षिपेत्, क्षिपेताम्, क्षिपेयुः । २ क्षिपेः, क्षिपेतम्, क्षिपेत । ३ क्षिपेयम्, क्षिपेव, क्षिपेम ॥

दशमगण (अय)

चुर् (चोरना) = १ चोरयेत्, चोरयेताम्, चोरयेयुः । २ चोरयेः, चोरयेतम्, चोरयेत । ३ चोरयेयम्, चोरयेव, चोरयेम ॥

अन्य गणोंके लिये विधिलिङ्के प्रत्यय निम्नलिखित होते हैं ।

१	...यात्	...याताम्	...युः
२	...याः	...यातम्	...यात
३	...याम्	...याव	...याम

द्वितीयगण (०)

अद् (खाना) = १ अद्यात्, अद्याताम्, अद्युः, । २ अद्याः, अद्यातम्, अद्यात । ३ अद्याम्, अद्याव, अद्याम ॥

तृतीयगण (द्वित्व)

दा (देना) = १ दद्यात्, दद्याताम्, दद्युः । २ दद्याः, दद्यातम्, दद्यात । ३ दद्याम्, दद्याव, दद्याम ॥

पंचमगण (नु)

साध् (साधन करना) = १ साध्नुयात्, साध्नुयाताम्, साध्नुयुः । २ साध्नुयाः, साध्नुयातम्, साध्नुयात । ३ साध्नुयाम्, साध्नुयाव, साध्नुयाम ॥

सप्तमगण (न)

पिष् (पिष्ट करना) = १ पिंष्यात्, पिंष्याताम्, पिंष्युः । २ पिंष्याः, पिंष्यातम्, पिंष्यात । ३ पिंष्याम्, पिंष्याव, पिंष्याम ॥

अष्टमगण (उ)

कृ (करना) = १ कुर्यात्, कुर्याताम्, कुर्युः । २ कुर्याः, कुर्यातम्, कुर्यात । ३ कुर्याम्, कुर्याव, कुर्याम ॥

नवमगण (ना)

स्तम्भ् (स्तंभन करना) = १ स्तभ्नीयात्, स्तभ्नीयाताम्, स्तभ्नीयुः । २ स्तभ्नीयाः, स्तभ्नीयातम्, स्तभ्नीयात । ३ स्तभ्नीयाम्

स्तभ्नीयाव, स्तभ्नीयाम ॥

आशीर्लिङ्

विधिलिङ् का उपयोग विधि कहनेके समय और आशीर्लिङ्का उपयोग आशीर्वादके अर्थमें किया जाता है, इसलिये आशीर्लिङ्के परस्मैपदी रूप बनानेकी रीति अब बतायी जाती है—

आशीर्लिङ् के प्रत्यय

१	...यात्	...यास्ताम्	...यासुः
२	...याः	...यास्तम्	...यास्त
३	...यासम्	...यास्व	...यास्म

भू (होना) = भूयात्, भूयास्ताम्, भूयासुः । २ भूयाः, भूयास्तम्, भूयास्त । ३ भूयासम्, भूयास्व, भूयास्म ॥

धु (हिलाना) = १ धूयात्, धूयास्ताम्, धूयासुः । २ धूयाः, धूयास्तम्, धूयास्त । ३ धूयासम्, धूयास्व, धूयास्म ॥

स्मृ (स्मरण करना) = १ स्मर्यात्, स्मर्यास्ताम्, स्मर्यासुः । २ स्मर्याः, स्मर्यास्तम्, स्मर्यास्त । ३ स्मर्यासम्, स्मर्यास्व, स्मर्यास्म ॥

दा (देना) = १ देयात, देयास्ताम्, देयासुः । २ देयाः, देयास्तम्, देयास्त । ३ देयासम्, देयास्व, देयास्म ॥

यज् (यज्ञ करना) = १ इज्यात्, इज्यास्ताम्, इज्यासुः । २ इज्याः, इज्यास्तम् इज्यास्त । ३ इज्यासम्, इज्यास्व, इज्यास्म ॥

पाठकोंने यहां देखा होगा कि गणकी भिन्नताका यहां कोई विशेष संबंध नहीं है, प्रायः सब धातुओंके रूप एकसे ही होते हैं । अस्तु । अब लिङ् के आत्मनेपदी रूप देखिये—

विधिलिङ् (आत्मनेपदी)

१	...ईत	...ईयाताम्	...ईरन्
२	...ईथाः	...ईयाथाम्	...ईध्वम्
३	...ईय	...ईवहि	...ईमहि

प्रथमगण (अ)

नी (ले जाना) १ नयेत, नयेयाताम्, नयेरन् । २ नयेथाः, नयेयाथाम्, नयेध्वम् । ३ नयेय, नयेवहि, नयेमहि ॥

चतुर्थगण (य)

शुच् (शुद्ध होना) = १ शुच्येत, शुच्येयाताम्, शुच्येरन् । २ शुच्येथाः, शुच्येयाथाम्, शुच्येध्वम् । ३ शुच्येय, शुच्येवहि, शुच्येमहि ॥

षष्ठगण (अ)

क्षिप् (फेंकना) = १ क्षिपेत, क्षिपेयाताम्, क्षिपेरन् । २ क्षिपेथाः, क्षिपेयाथाम्, क्षिपेध्वम् । ३ क्षिपेय, क्षिपेवहि, क्षिपेमहि ॥

दशमगण (अय)

तड् (डाटना) = १ ताडयेत, ताडयेयाताम्, ताडयेरन् । २ ताडयेथाः, ताडयेयाथाम्, ताडयेध्वम् । ३ ताडयेय, ताडयेवहि, ताडयेमहि ॥

द्वितीयगण (०)

आस् (बैठना) = १ आसीत, आसीयाताम्, आसीरन् । २ आसीथाः, आसीयाथाम्, आसीध्वम् । ३ आसीय, आसीवहि, आसीमहि ॥

तृतीयगण (द्वित्व)

दा (देना) = १ ददीत, ददीयाताम्, ददीरन् । ददीथाः, ददीयाथाम्, ददीध्वम् । ३ ददीय, ददीवहि, ददीमहि ॥

पंचमगण (नु)

सु (रस निकालना) = १ सुन्वीत, सुन्वीयाताम्, सुन्वीरन् । २ सुन्वीथाः, सुन्वीयाथाम्, सुन्वीध्वम् । ३ सुन्वीय, सुन्वीवहि, सुन्वीमहि ॥

सप्तमगण (न)

इन्ध् (जलाना) = १ इन्धीत, इन्धीयाताम्, इन्धीरन् । २ इन्धीथाः, इन्धीयाथाम्, इन्धीध्वम् । ३ इन्धीय, इन्धीवहि, इन्धीमहि ॥

अष्टमगण (उ)

कृ (करना) = १ कुर्वीत, कुर्वीयाताम्, कुर्वीरन् । २ कुर्वीथाः, कुर्वीयाथाम्, कुर्वीध्वम् । ३ कुर्वीय, कुर्वीवहि, कुर्वीमहि ॥

नवमगण (ना)

क्री = (क्रय करना) = १ क्रीणीत, क्रीणीयाताम्, क्रीणीरन् । २ क्रीणीथाः, क्रीणीयाथाम्, क्रीणीध्वम् । ३ क्रीणीय, क्रीणीवहि, क्रीणीमहि ॥

आशीर्लिङ् (आत्मनेपदी प्रत्यय)

१	...सीष्ट	...सीयास्ताम्	...सीरन् ।
२	...सीष्ठाः	...सीयास्थाम्	...सीध्वम् ।
३	...सीय	...सीवहि	...सीमहि ।

धु (हिलाना) = १ धोषीष्ट, धोषीयास्ताम्, धोषीरन् । २ धोषीष्ठाः, धोषीयास्थाम्, धोषीढ्वम् । ३ धोषीय, धोषीवहि, धोषीमहि ॥

जन् (उत्पन्न करना) = १ जनिषीष्ट, जनिषीयास्ताम्, जनिषीरन् । २ जनिषीष्ठाः, जनिषीयास्थाम्, जनिषीढ्वम् । ४ जनिषीय, जनिषीवहि जनिषीमहि ॥

आशीर्लिङ् के रूप सब धातुओंके इसी प्रकार बनते हैं ।

रामायणम् ।

एवं सान्त्वितो रामो वस्त्रान्तेनाश्रूणि प्रमार्जयत् । सुग्रीवमुवाच च– "कृतं कृतं त्वया मित्रस्य कर्तव्यम् । दुर्लभो हि त्वत्सदृशो बंधुः । विशेषत एवंविधेऽस्मिन्काले । किंतु त्वया महान्यत्नः कार्यः सीतायाः परिमार्गणे ।" इति ।

ततो मधुरया गिरा प्रणयात्सुग्रीव उवाच–" भ्रात्रा हृतभार्योऽहं भयार्दितश्चरामि गिरिं ऋष्यमूकम् । मम भ्रातुर्वालिनो भयान्मां त्रातुमर्हसि ।" इति ।

एवमुक्तस्तु धर्मवत्सलो रामः सुग्रीवं प्रहसन्निव प्रत्युवाच- " उपकार-लक्षणं मित्रं, आरिलक्षणं अपकारः। अतस्तव भार्यापहारिणं त्वद्भ्रातरमद्यैव हनिष्यामि। " इति।

तच्छ्रुत्वा हृष्टः सुग्रीवो रामं प्रशशंस च। उवाच च रामम्— " राम! वालिनः शौर्यं वीर्यं पौरुषं च श्रुत्वा यद्युक्तं तद्विधत्स्व। शृणु तस्य वीर्यं-अनुदिते सूर्ये वाली अविश्रान्तः पश्चिमं समुद्रं क्रामति। शैलशिखराण्य—प्यूर्ध्वं तरसोत्पातयति। एवंविधं बलिष्ठं कथं त्वं हन्तुं शक्ष्यसे ?

लिङ्के लिये लेट्

लिङ् इससे पूर्व बताया ही है जिसके भेद विधिलिङ् और आशीर्लिङ् पाठक जानते ही हैं। वेदमें इस लिङ् के स्थानपर " लेट् " का प्रयोग होता है। इस समयतक " लेट् " के रूप बनानेकी रीति कही नहीं। क्योंकि इस " लेट् " के प्रयोग केवल वेदमें ही आते हैं और कहीं भी नहीं आते। वेदके शब्द नये घडे नहीं जाते। वेदमें जो शब्द बनेबनाये हैं उनको ही पढना है। इसलिये इसके रूप बनानेकी कोई आवश्यकता नहीं है। " लिङ् " के अर्थमें " लेट् " होता है इतना ही पाठक ध्यानमें धारण करें।

पाठक इस पाठको पढें और समझनेका यत्न करें।

पाठ ५

भविष्यकाल (लृट्)

इस पुस्तकके प्रथम पाठमें वर्तमानकालके प्रत्यय दिये हैं, धातु और इन प्रत्ययोंके बीचमें " स्य " लगानेसे भविष्यकाल बनता है। जैसा-

भू = भव + ति = भवति

भू = भव् + स्य + ति = भविष्यति

सर्व धातुओंके लिये इसके नियम समान ही हैं परंतु विशेषता इतनी ही है कि कई धातुको " स्य " के पूर्व " इ " लगती है और कइयोंको नहीं। इसके उदाहरण ये हैं—

कृ = १ करिष्यति, करिष्यतः, करिष्यन्ति। २ करिष्यसि, करिष्यथः, करिष्यथ। ३ करिष्यामि, करिष्यावः, करिष्यामः॥

सूचना– आत्मनेपदके प्रत्यय लगनेसे उक्त प्रकार आत्मनेपदी धातुओंके रूप बनते हैं। जैसा–

कृ = १ करिष्यते, करिष्येते, करिष्यन्ते। २ करिष्यसे, करिष्येथे, करिष्यध्वे। ३ करिष्ये, करिष्यावहे, करिष्यामहे॥

जिन धातुओंको " इ " कार लगता नहीं उनके रूप निम्नलिखित प्रकार होते हैं।

दृश् = १ द्रक्ष्यति, द्रक्ष्यतः, द्रक्ष्यन्ति। २ द्रक्ष्यसि, द्रक्ष्यथः, द्रक्ष्यथ। ३ द्रक्ष्यामि, द्रक्ष्यावः, द्रक्ष्यामः॥

सृज् = १ स्रक्ष्यति, स्रक्ष्यतः, स्रक्ष्यन्ति। २ स्रक्ष्यसि, स्रक्ष्यथः, स्रक्ष्यथ। ३ स्रक्ष्यामि, स्रक्ष्यावः, स्रक्ष्यामः॥

इन उदाहरणोंके देखनेसे पाठकोंको विश्वास हुआ होगा कि इस भविष्य–कालके रूप करना सुगम है। क्योंकि संपूर्ण धातुओंके लिये प्रत्यय एकसे ही हैं। तथापि पाठकोंकी सुविधाके लिये यहां इसके प्रत्यय देता हूं–

भविष्यकाल (लृट्) के प्रत्यय।

परस्मैपदी।

१	...स्यति	...स्यतः	...स्यन्ति
२	...स्यसि	...स्यथः	...स्यथ
३	...स्यामि	...स्यावः	...स्यामः

आत्मनेपदी।

१	...स्यते	...स्येते	...स्यन्ते
२	...स्यसे	...स्येथे	...स्यध्वे
३	...स्ये	...स्यावहे	...स्यामहे

इकारके स्यका ' ष्य ' बनता है और ' भविष्यति ' आदि रूप होते हैं ।

हेतुहेतुमद्भावार्थ । (लृङ्)

चतुर्थ पाठके प्रारंभमें इसी पुस्तकमें अनद्यतनभूत (लङ्) के प्रत्यय
हैं उनके पूर्व ' स्य ' लगानेसे इस लृङ् के रूप बनते हैं । सुबोधताके
इसके प्रत्यय यहां देते हैं । इसमें भी लङ् (अनद्यतनभूतके समान)
के पीछे ' अ ' लगता है; अब इसके प्रत्यय देखिये—

हेतुहेतुमद्भावार्थ

परस्मैपदी प्रत्यय ।

१	...स्यत्	...स्यताम्	...स्यन्
२	...स्यः	...स्यतम्	... स्यत
३	...स्यम्	...स्याव	.. स्याम

आत्मनेपदी प्रत्यय ।

१	...स्यत	...स्येताम्	...स्यन्त
२	...स्यथाः	...स्येथाम्	...स्यध्वम्
३	...स्ये	...स्यावहि	...स्यामहि

अब इनके उदाहरण देखिये—

परस्मैपदी धातु ।

बुध् – १ अबोधिष्यत्, अबोधिष्यताम्, अबोधिष्यन् । २ अबोधिष्यः, अबोधिष्यतम्, अबोधिष्यत । ३ अबोधिष्यम्, अबोधिष्याव, अबोधिष्याम ॥

नी – १ अनेष्यत्, अनेष्यताम् अनेष्यन् । २ अनेष्यः, अनेष्यतम्, अनेष्यत । ३ अनेष्यम्, अनेष्याव, अनेष्याम ॥

आत्मनेपदी धातु ।

वृध् – १अवर्धिष्यत, अवर्धिष्येताम्, अवर्धिष्यन्त । २ अवर्धिष्यथाः, अवर्धिष्येथाम्, अवर्धिष्यध्वम् । ३ अवर्धिष्ये, अवर्धिष्यावहि, अवर्धिष्यामहि ॥

नी – १ अनेष्यत, अनेष्येताम्, अनेष्यन्त । २ अनेष्यथाः, अनेष्येथाम्, अनेष्यध्वम् । ३ अनेष्ये, अनेष्यावहि, अनेष्यामहि ॥

हेतुहेतुमद्भावार्थके रूपोंका उपयोग हेतु दर्शानेके वाक्योंमें होता है। जैसा— "यदि स तत्रागमिष्यत् तर्हि एवं नाभविष्यत्।" (यदि वह वहां जाता तो ऐसा न होता) इस प्रकारके वाक्योंमें हेतुमद्भावका प्रयोग होता है।

अब अनद्यतन-भविष्यके रूप बनानेका विधि देखिये—

अनद्यतन-भविष्य (लुट्)

अनद्यतन-भविष्य (लुट्) के प्रत्यय निम्नलिखित हैं। संपूर्ण धातुओंके लिये येही प्रत्यय हैं—

परस्मैपदी।

१	...ता	...तारौ	...तारः
२	...तासि	...तास्थः	...तास्थ
३	...तास्मि	...तास्वः	...तास्मः

दा (देना) = १ दाता, दातारौ, दातारः। २ दातासि, दातास्थः, दातास्थ। ३ दातास्मि, दातास्वः, दातास्मः ॥

भ्रम् (भ्रमण करना) = १ भ्रमिता, भ्रमितारौ, भ्रमितारः। २ भ्रमितासि, भ्रमितास्थः, भ्रमितास्थ। ३ भ्रमितास्मि, भ्रमितास्वः, भ्रमितास्म ॥

आत्मनेपदी।

१	...ता	..तारौ	...तारः
२	...तासे	...तासाथे	...ताध्वे
३	...ताहे	...तास्वहे	...तास्महे

आत्मनेपदी धातुओंको ये प्रत्यय लगते हैं और अनद्यतन-भविष्यके रूप बन जाते हैं—

दा (देना) – १ दाता, दातारौ, दातारः। २ दातासे, दातासाथे, दाताध्वे। ३ दाताहे, दातास्वहे, दातास्महे ॥

ये प्रत्यय लगनेके पूर्व भी कई धातुओंको "इ" लगती है और कइयोंके लिये नहीं लगती। अथवा कई धातुओंको विकल्पसे लगती है देखिये—

लुभ् (लोभ करना)

इकारयोग - १ लोभिता, लोभितारौ, लोभितारः। २ लोभितासि, लोभितास्थः, लोभितास्थ। ३ लोभितास्मि, लोभितास्वः, लोभितास्मः॥

इकाररहित - १ लोब्धा, लोब्धारौ, लोब्धारः। २ लोब्धासि, लोब्धास्थः, लोब्धास्थ। ३ लोब्धास्मि, लोब्धास्वः, लोब्धास्मः॥

जिन धातुओंको इकार (इट्) लगता है उनको "सेट्" (स+इट् = इकारसहित) कहते हैं, जिनको नहीं लगता उन धातुओंको 'अनिट्' (अन्+इट् = इकाररहित) कहा जाता है और जिनको विकल्पसे इकार लगता है उनको 'वेट्' (वा+इट् = विकल्पसे इट्वाला) कहते हैं। धातु सेट्, अनिट् वा वेट् पहिलेसे ही निश्चित हैं और जो धातु जैसा है उसके वैसे ही रूप बनते हैं।

पाठ ६

पूर्णभूतकाल (लिट्)

अनद्यतन-परोक्ष-भूतकालके लिये 'लिट्' कहते हैं। जो क्रिया आज नहीं हुई और जो क्रिया देखी भी नहीं उसके लिये इस लिट्के रूप प्रयुक्त किये जाते हैं। जैसा 'रामो राजा बभूव' (राम राजा हुआ था।) अर्थात् कहनेवालेके सामने राम राजा नहीं हुआ और बहुत दिन पूर्व हुआ था। इस लिट् के प्रत्यय ये हैं—

परस्मैपदी (लिट्)

१	...अ	...अतुः	...उः
२	...थ	...अथुः	...अ
३	...अ	...व	...म

भू (होना) – १ बभूव, बभूवतुः, बभूवुः । २ बभूविथ, बभूवथुः, बभूव । ३ बभूव, बभूविव, बभूविम ॥

इसमें धातुके प्रथमाक्षरका द्वित्व होता है और उस वर्णका मृदुत्व भी होता है। जैसा–'भू+अ'= 'भू भू+अ' = 'बुभू+अ' = बभू+अ = बभूव। इस ढंगसे रूप बनते हैं। और उदाहरण देखिये—

यु (मिश्रण करना)— १ युयाव, युयुवतुः, युयुवुः । २ युयुविथ, युयुवथुः, युयुव । ३ युयाव, युयुविव, युयुविम ॥

रु (शब्द करना) — १ रुराव, रुरुवतुः, रुरुवुः । २ रुरुविथ, रुरुवथुः, रुरुव । ३ रुराव, रुरुविव, रुरुविम ॥

वृ (पसंद करना)– १ ववार, वव्रतुः, वव्रुः । २ ववरिथ, वव्रतुः वव्र । ३ ववार, ववृव, ववृम ॥

मुच् (मुक्त करना)– १ मुमोच, मुमुचतुः, मुमुचुः । २ मुमोचिथ, मुमुचथुः, मुमुच । ३ मुमोच, मुमुचिव, मुमुचिम ॥

वच् (बोलना)– १ उवाच, ऊचतुः, ऊचुः । २ उवचिथ, ऊचथुः, ऊच । उवाच, ऊचिव, ऊचिम ॥

प्रच्छ (पूछना) – १ पप्रच्छ, पप्रच्छतुः, पप्रच्छुः । २ पप्राच्छिथ, पप्रच्छथुः, पप्रच्छ । ३ पप्रच्छ, पप्राच्छिव, पप्राच्छिम ॥

त्यज् (छोडना) – १ तत्याज, तत्यजतुः, तत्यजुः । २ तत्याजथ, तत्यजथुः, तत्यज । ३ तत्याज, तत्यजिव, तत्याजिम ॥

भुज् (भोजन करना)– १ बुभोज, बुभुजतुः, बुभुजुः । २ बुभोजिथ, बुभुजथुः, बुभोज । ३ बुभोज, बुभुजिव, बुभुजिम ॥

युज् (जोड़ना) = १ युयोज, युयुजतुः, युयुजुः। २ युयोजिथ, युयुजथुः, युयुज। ३ युयोज, युयुजिव, युयुजिम॥

तप् (तप करना) = १ तताप, तेपतुः, तेपुः। २ ततपिथ, ततपिथुः, तेप। ३ तताप, तेपिव, तेपिम॥

इस रीतिसे परस्मैपदी धातुओंके रूप बनते हैं। अब आत्मनेपदी धातुओंके रूप देखिये—

भूतकाल (लिट्) आत्मनेपदी।

आत्मनेपदी लिट्के प्रत्यय निम्नलिखित हैं-

१	...ए	...आते	...इरे
२	...से	...आथे	...ध्वे
३	...ए	...वहे	...महे

इन प्रत्ययोंके द्वारा आत्मनेपदी धातुओंके रूप इस प्रकार बनते हैं—

रु (शब्द करना) = १ रुरुवे, रुरुवाते रुरुविरे। २ रुरुविवे, रुरुवाथे, रुरुविध्वे। ३ रुरुवे, रुरुविवहे, रुरुविमहे॥

शी (सोना) = १ शिश्ये, शिश्याते, शिश्यिरे। २ शिश्यिषे, शिश्याथे, शिश्यिध्वे। ३ शिश्ये, शिश्यिवहे, शिश्यिमहे॥

वृ (पसंद करना) = १ वव्रे, वव्राते, वव्रिरे। २ ववृषे, वव्राथे, ववृड्ढ्वे। ३ वव्रे, ववृवहे, ववृमहे॥

पच् (पकाना) = १ पेचे, पेचाते, पेचिरे। २ पेचिषे, पेचाथे, पेचिध्वे। ३ पेचे, पेचिवहे, पेचिमहे॥

भज् (सेवा करना) = १ भेजे, भेजाते, भेजिरे। २ भेजिषे, भेजाथे, भेजिध्वे। ३ भेजे, भेजिवहे, भेजिमहे॥

यज् (यज्ञ करना) = १ ईजे, ईजाते, ईजिरे। २ ईजिषे, ईजाथे, ईजिध्वे। ३ ईजे, ईजिवहे, ईजिमहे॥

विद् (विचार करना) = १ विविदे, विविदाते, विविदिरे। २ विविदिषे, विविदाथे, विविदिध्वे। ३ विविदे, विविदिवहे, विविदिमहे॥

बुध् (जानना) = १ बुबुधे, बुबुधाते, बुबुधिरे । २ बुबुधिषे, बुबुधाथे, बुबुधिध्वे । ३ बुबुधे, बुबुधिवहे, बुबुधिमहे ॥

मन् (विचार करना) = १ मेने, मेनाते, मेनिरे । २ मेनिषे, मेनाथे, मेनिध्वे । ३ मेने, मेनिवहे, मेनिमहे ॥

लभ् (लाभ करना) = १ लेभे, लेभाते, लेभिरे । २ लेभिषे, लेभाथे, लेभिध्वे । ३ लेभे, लेभिवहे, लेभिमहे ॥

कृष् (हल चलाना) = १ चकृषे, चकृषाते, चकृषिरे । २ चकृषिषे, चकृषाथे, चकृषिध्वे । ३ चकृषे, चकृषिवहे, चकृषिमहे ॥

धु (हिलाना) = १ दुधुवे, दुधुवाते, दुधुविरे । २ दुधुविषे, दुधुवाथे, दुधुविध्वे । ३ दुधुवे, दुधुविवहे दुधुविमहे ॥

कृ--भू-अस् धातुओंका प्रयोग

धातुको 'आम्' प्रत्यय लग कर उसके साथ 'कृ, भू, अस्' इन तीन धातुओंके लिट्के रूप लगाने से भी लिट् के रूप बनानेकी एक रीति, है। कृ, भू, अस् धातुके परस्मैपदी और आत्मनेपदी रूप निम्न प्रकार हैं।

कृ (परस्मै०) = १ चकार, चक्रतुः, चक्रुः । २ चकर्थ, चक्रथुः, चक्रः । ३ चकार, चकृव, चकृम ॥

कृ (आत्मने०) = १ चक्रे, चक्राते, चक्रिरे । २ चकृषे, चक्राथे, चकृढ्वे । ३ चक्रे, चकृवहे, चकृमहे ॥

भू (परस्मै०) = १ बभूव, बभूवतुः, बभूवुः । २ बभूविथ, बभूवथुः बभूव । ३ बभूव, बभूविव, बभूविम ॥

अस् (परस्मै०) = १ आस, आसतुः, आसुः । २ आसिथ, आसथुः आस । ३ आस, आसिव, आसिम ॥

ये रूप निम्नप्रकार धातुओंके साथ लगकर लिट् के रूप बनते हैं—

कास् (खांसना)

१ कासाञ्चक्रे, कासाञ्चक्राते, कासांचक्रिरे ।

१ कासामास, कासामासतुः, कासामासुः ।

१ कासांबभूव, कासांबभूवतुः, कासांबभूवुः ।

कथ् (कहना)

१ कथयांचकार, कथयांचक्रतुः, कथयांचक्रुः ।

१ कथयांचक्रे, कथयांचक्राते, कथयांचक्रिरे ।

१ कथयामास, कथयामासतुः, कथयामासुः ।

१ कथयांबभूव, कथयांबभूवतुः, कथयांबभूवुः ।

यहां प्रथम पुरुषके रूप बताये हैं, अन्य पुरुषोंके अर्थात् द्वितीय तथा उत्तम पुरुषोंके रूप इस प्रकार पूर्वोक्त रूप लगाकर पाठक बना सकते हैं ।

पाठ ७

भूतकाल (लुङ्)

इस भूतकालके कई प्रकारके प्रत्यय हैं, उनमें प्रथम विभागके प्रत्यय ये हैं—

परस्मैपदी ।

१	...त्	...ताम्	...उस्
२	...स् (:)	...तम्	...त
३	...अम्	...व	...म

ये प्रत्यय प्रायः अनद्यतनभूत (लङ्) के प्रत्ययोंके समान ही हैं केवल भेद इतना है कि " अन् " प्रत्ययके स्थानपर यहां ' उस् ' प्रत्यय है । इनके रूप ये हैं—

स्था (ठहरना) = १ अस्थात्, अस्थाताम्, अस्थुः । २ अस्थाः, अस्थातम्, अस्थात । ३ अस्थाम्, अस्थाव, अस्थाम ॥

दा (देना)= १ अदात्, अदाताम्, अदुः । २ अदाः, अदातम्, अदात । ३ अदाम्, अदाव, अदाम ॥

पा (पीना) = १ अपात्, अपाताम्, अपुः । २ अपाः, अपातम्, अपात ।
३ अपाम्, अपाव, अपाम ॥

जिन धातुओंके अंतमें आ न हो उन धातुओंके लिये " लङ् " के समान " अन् " प्रत्यय " उस् " के स्थानपर होता है ।

भू (होना) = १ अभूत्, अभूताम्, अभूवन् । २ अभूः, अभूतम्, अभूत । ३ अभूवम्, अभूव, अभूम ॥

पाठकोंके ध्यानमें यह बात आ चुकी होगी कि, इस भूतकालमें " भू " का " भव् " बनता नहीं और न गुण होता है । इसीलिये " अभूत् " रूप बना है अन्यथा पूर्वोक्त लङ् का रूप " अभवत् " होता है । यही लङ् और लुङ् के रूपोंमें भेद है ।

परस्मैपदी प्रत्यय- १ ... ...त् ...ताम् ...न् । २ ...स् ...तम् ...त । ३ ...म् ...व ...म ।

शक (समर्थ होना)

१ अशकत्, अशकताम्, अशकन् । २ अशकः, अशकतम्, अशकत ।
३ अशकम्, अशकाव, अशकाम ॥

वच् (बोलना)

१ अवोचत्, अवोचताम्, अवोचन् । २ अवोचः, अवोचतम्, अवोचत ।
३ अवोचम्, अवोचाव, अवोचाम ॥

सिच् (छिटकना)

१ असिचत्, असिचाताम् असिचन् । २ असिचः, असिचतम्, असिचत ।
३ असिचम्, असिचाव, असिचाम ॥

आत्मनेपदी प्रत्यय- १ ...त ...इताम् ...न्त । २ ...थाः, इथाम्... ध्वम् । ३ इ ...वहि ...महि ।

लिप् (लीपना)

१ अलिपत, अलिपेताम्, अलिपन्त । २ अलिपथाः, अलिपेथाम्, अलिपध्वम् । ३ अलिपे, अलिपावहि, अलिपामहि ॥

इस प्रकार अन्यान्य धातुओंके रूप होते हैं। पाठक इस प्रकार अन्य धातुओंके रूप बना सकते हैं, इसीके कई अन्य प्रकार हैं परंतु उन सबको जाननेका कोई विशेष प्रयोजन नहीं है।

णिजन्त (प्रयोजक) क्रिया।

क्रियाके दो भेद हैं। एक स्वयं करनेकी क्रिया और दूसरी दूसरेके द्वारा करानेकी क्रिया। जैसे करना, कराना। पहिली स्वयं करनेकी है और दूसरी दूसरेसे करानेकी है। पहिले प्रकारके रूप इस समयतक दिये ही हैं, अब दूसरे प्रकारके देते हैं।

धातु	अर्थ	णिजन्त (प्रयोजक)	रूप
१ स्फुर-	(स्फुरण करना)	स्फारयति, स्फारयते।	
२ पा-	(रक्षण करना)	पालयति, पालयते।	
३ दा =	(देना)	दापयति	ते।
४ रुह् =	(बढना)	रोहयति	ते।
५ दुष् =	(दूषित करना)	दूषयति	ते।
६ प्री =	(प्रीति करना)	प्रीणयति	ते।
७ व्यथ् =	(दुःखी करना)	व्यथयति	ते।
८ प्रथ् =	(प्रसिद्ध होना)	प्रथयति	ते।
९ नट् =	(नाचना)	नटयति, नाटयति	ते।
१० ज्वल् =	(जलना)	ज्वलयति, ज्वालयति	ते।
११ चल् =	(चलना)	चलयति, चालयति	ते।
१२ ध्वन् =	(शब्द करना)	ध्वनयति, ध्वानयति	ते।
१३ क्रम् =	(आक्रमण करना)	क्रमयति।	ते।
१४ नम् =	(नम्र होना)	नमयति, नामयति	ते।
१५ स्ना =	(स्नान करना)	स्नपयति, स्नापयति	ते।
१६ कम् =	(इच्छा करना)	कामयति	ते।
१७ शम् =	(शांत करना)	शामयति	ते।

१८ यम् = (स्वाधीन रखना) यामयति—ते ।

ये प्रयोजक क्रियाके वर्तमानकालके रूप हैं । इनके अन्य लकारोंके रूप पूर्व पाठोंमें बतायी रीतिके अनुसार ही होते हैं । इनके अर्थ इस प्रकार होते हैं —

दा- ददाति	(देता है)
दापयति	(दिलाता है)
व्यथ्-व्यथते	(दुःखी होता है)
व्यथयति	(दुःख देता है)
नट्-नटति	(नाचता है)
नटयति	(नचाता है)
चल्-चलति	(चलता है)
चलयति	(चलाता है)
नम्-नमति	(नम्र होता है)
नमयति	(नमाता है)
स्ना-स्नाति	(स्नान करता है)
स्नापयति	(स्नान कराता है)

इस प्रकार इनके अर्थ हैं । यह प्रयोजक क्रिया बहुत उपयोगी है ।

श्लोकपाठः ।

एवं बहुविधैर्वाक्यैर्याच्यमानस्तया नृपः ।
नाश्रद्दधच्छाल्वपतिः कन्यायां भरतर्षभ ॥ २० ॥
ततः सा मन्युनाऽऽविष्टा ज्येष्ठा काशिपतेः सुता ।
अब्रवीत्साऽश्रुनयना बाष्पविप्लुतया गिरा ॥ २१ ॥

(म० भा० उद्योग० अ० १७५)

' हे भरतर्षभ ! एवं तया बहुविधैः वाक्यैः याच्यमानः नृपः शाल्वपतिः तस्यां कन्यायां न अश्रद्दधत् ॥ ततः सा काशिपतेः ज्येष्ठा सुता मन्युना आविष्टा साश्रुनयना बाष्पविप्लुतया गिरा अब्रवीत् ॥

पाठ ८

सन्नन्त-क्रिया।

गम् (जाना) = गच्छति (जाता है)।

जिगमिषति (जाना चाहता है)। यह सन्नन्त क्रिया है।

पठ् (पढना) = पठति (पढता है)।

पिपठिषति (पढनेकी इच्छा करता है) ,, ,, ,,

ये सन्नन्त-क्रियाके उदाहरण हैं। किसीके करनेकी इच्छा करनेका भाव व्यक्त करनेके लिये इस क्रियाका प्रयोग होता है। इस क्रियामें धातुका द्वित्व होता है और पश्चात् ' स ' प्रत्यय लगता है, जैसा—

भू = भु भू = बुभू + स = बुभूष + ति = बुभूषति (होनेकी इच्छा करता है) इसी प्रकार इस क्रियाके रूप बनते हैं।

१ भू	(होना)	...	बुभूषति।
२ पठ्	(पढना)	...	पिपठिषति।
३ मुष्	(चोरना)	...	मुमुषिषति।
४ भिद्	(भेद करना)	...	बिभित्सति।
५ हन्	(मारना)	...	जिघांसति।
६ गम्	(जाना)	...	जिगमिषति।
७ लिख्	(लिखना)	...	लिलिखिषति।
८ ज्ञा	(जानना)	...	जिज्ञासते।
९ मान्	(मानना)	...	मीमांसते।
१० स्था	(ठरना)	...	तिष्ठासति।
११ रक्ष्	(रक्षण करना)	...	रिरक्षिषति।
१२ कृ	(करना)	...	चिकीर्षति।
१३ लष्	(इच्छा करना)	...	लिलषिषति।
१४ वद्	(बोलना)	...	विवदिषति।

इनके अर्थ कैसे होते हैं, इस बातको पहिले ही दर्शाया है। इसलिये उसको फिर यहां दुहराना आवश्यक नहीं है।

यहां क्रियापद विचार समाप्त हुआ। अब उपसर्गके साथ धातुओंका प्रयोग करनेकी विधि बतानी है।

उपसर्ग और धातु।

धातुके पूर्व उपसर्ग लगता है और धातुका अर्थ भी बदल होता है। जैसे-

गम्— (जाना) गच्छति, अगच्छत्, गमिष्यति, जगाम।

इसीको उपसर्ग लगनेसे क्रियाएं निम्नलिखित प्रकार होती हैं—

१ प्रगच्छति, संगच्छति, उद्गच्छति, अनुगच्छति।

२ प्रागच्छत्, समगच्छत्, उदगच्छत्, अन्वगच्छत्।

(प्र+अगच्छत्, सम्+अगच्छत्। उत्+अगच्छत्। अनु+अगच्छत्।)

३ प्रगमिष्यति, संगमिष्यति, उद्गमिष्यति, अनुगमिष्यति।

४ प्रजगाम, संजगाम, उज्जगाम, अनुजगाम।

प्रत्येक लकारका रूप बननेके पश्चात् वह इष्ट उपसर्गके पश्चात् रखा जाता है। अर्थात् ' संगम् ' धातुका लङ् का रूप ' समगच्छत् ' होता है क्योंकि लङ् का रूप ' अगच्छत् ' है और उसके पूर्व ' सम् ' उपसर्ग लग जानेसे ' सम्+अगच्छत् = समगच्छत् ' बन जाता है। इसी प्रकार अन्यान्य धातुओंके रूप करनेका यत्न करना चाहिये। पाठकोंकी सुविधाके लिये कुछ उदाहरण यहां दिये जाते हैं—

१ गम् (जाना)

१ अधि+गम् = (प्राप्त करना) = अधिगच्छति, अध्यगच्छत्, अधिगमिष्यति।

२ अनु+गम् = (पीछे चलना) = अनुगच्छति, अन्वगच्छत्, अनुगमिष्यति।

३ अव+गम् = (जानना) = अवगच्छति, अवागच्छत्, अवगमिष्यति ।

४ आ+गम् (आना) आगच्छति, आगच्छत्, आगमिष्यति ।

५ उप+गम् = (समीप जाना) = उपगच्छति, उपागच्छत्, उपगमिष्यति ।

६ निगम् = (जाना) = निगच्छति, न्यगच्छत्, निगमिष्यति ।

७ निर्गम् = (बाहर जाना) = निर्गच्छति, निरगच्छत्, निर्गमिष्यति ।

८ विगम् = (चला जाना) = विगच्छति, व्यगच्छत्, विगमिष्यति ।

९ संगम् = (मिलना) = संगच्छति, समगच्छत्, संगमिष्यति ।

इसी प्रकार अन्यान्य धातुओंसे अन्यान्य उपसर्ग लगकर विविध धातु बनते हैं। समय समयपर एकसे भी अधिक उपसर्ग लग जाते हैं। अब अन्य धातुओंके भी कई उदाहरण देखिये ।

उपवस् = (उपवास करना) उपवसति, उपावसत्, उपवसिष्यति ।
निर्मुच् = (छोडना) = निर्मुञ्चति, निरमुञ्चत, निर्मोक्ष्यति ।
निर्या = (जाना) = निर्याति, निरयात्, निर्यास्यति ।
प्रदह् = (जलाना) = प्रदहति, प्रादहत्, प्रधक्ष्यति ।
प्रदुष् = (दोषयुक्त बनना) प्रदुष्यति, प्रादुष्यत्, प्रदोक्ष्यति ।
विक्रम् = (पराक्रम करना) = विक्रमति, व्यक्रमत्, विक्रमिष्यति ।
विगर्ह् = (निंदा करना) = विगर्हति, व्यगर्हत, विगर्हिष्यति ।
विचल् = (हिलना) = विचलति, व्यचलत् विचलिष्यति ।
वितॄ = (पार होना, देना) = वितरति, व्यतरत्, वितरिष्यति ।
संभू = (जन्म लेना) = संभवति, समभवत्, संभविष्यति ।
संभाष् = (संभाषण करना) = संभाषते, समभाषत, संभाषिष्यते ।

इसी प्रकार अन्यान्य धातुओंके उपसर्गपूर्वक रूप जानने उचित हैं। इनके प्रयोग संस्कृत भाषामें सैकडों स्थानोंपर आते हैं। इसलिये उपसर्गपूर्वक धातुओंके रूपोंका महत्त्व पाठक स्वयं ही जान सकते हैं। उदाहरणके लिये निम्नलिखित श्लोक देखिये—

आत्मवीर्यं समाश्रित्य भृत्यवीर्यं च कौरव।
आह्वयस्व रणे पार्थान्सर्वथा क्षत्रियो भव ॥ ५४ ॥
परवीर्यं समाश्रित्य यः समाह्वयते परान्।
अशक्तः स्वयमादातुमेतदेव नपुंसकम् ॥ ५५ ॥
(म० भा० उद्योग० अ० १६२)

"अपने वीर्यका और नौकरोंके पराक्रमका आश्रय करके, हे कौरव! युद्धमें (पार्थान्) पांडवोंको आह्वान कर, सब प्रकारसे क्षत्रिय बन॥ दूसरेके बलका आश्रय करके जो शत्रुओंको युद्धके लिये आह्वान करता है और स्वयं युद्धका भार उठानेमें अशक्त होता है, वह नपुंसक है॥"

इन श्लोकोंसे—

समाश्रित्य = (सम्+आ+श्रि),
आह्वयस्व = (आ+ह्वे),
समाह्वयते = (सं+आ+ह्वे),
आदातुं = (आ+दा)

ये सब रूप उपसर्गपूर्वक धातुओंके हैं। पाठक इस प्रकार जान लें।

पाठ ९

धातुसाधित रूप।

धातुके साथ प्रत्यय लगकर कई आवश्यक रूप बनते हैं और उनका वारंवार उपयोग होता है, इसलिये इस पाठमें इन प्रत्ययोंका विचार करना है।

'तुम्' प्रत्यय

क्रियाके करने 'के लिये' इस अर्थमें यह प्रत्यय लगता है। जैसे—

कृ (करना)	- कर्तुम्।	(करनेके लिये)
गम् (जाना)	-गन्तुम्।	(जानेके ,,)
लिख् (लिखना)	- लेखितुम्।	(लिखनेके ,,)
सेव् (सेवा करना)	- सेवितुम्।	(सेवा करनेके,,)

ये रूप वारंवार संस्कृत-भाषामें प्रयुक्त होते हैं और इनका बनना बड़ा आसान है। इसलिये कई रूप यहां देते हैं—

अंक् (चिह्न करना) = अंकयितुम्
अत् (जाना) = अतितुम्
अद् (खाना) = अत्तुम्
अन् (जीवन धारण करना) = अनितुम्
अर्च् (पूजा करना) = अर्चितुम् (१ गण)। अर्चयितुम् (१० गण)
अर्थ् (मांगना) = अर्थयितुम्
अव् (रक्षा करना) = अवितुम्
अश् (भोजन करना) = अशितुम्
आप् (व्यापना) = आप्तुम्
कथ् (कहना) = कथयितुम्
कम्प् (हिलना) = कम्पितुम्
कृष् (हल चलाना) = कर्ष्टुम्
क्रम् (चलना) = क्रमितुम्
गण् (गिनना) = गणयितुम्
छिद् (काटना) = छेत्तुम्
जी (जय प्राप्त करना) = जेतुम्
तड् (ताडन करना) = ताडयितुम्

इसी प्रकार अन्यान्य धातुओंसे ' तुम् ' प्रत्ययान्त धातुसाधित रूप बनते हैं। अब पाठक इनको पहचान सकते हैं।

' त्वा ' प्रत्यय

' ...करके ' इस अर्थमें संस्कृत धातुओंको ' त्वा ' प्रत्यय लगकर रूप बनते हैं, जैसे—

गम् = गत्वा = (जाकर)
पा = पीत्वा = (पीकर)
भुज् = भुक्त्वा = (भोजन करके)
नम् = नत्वा = (नमन करके)
तृष् = तृषित्वा = (तृषित होकर)

इस प्रकार रूप इस प्रत्ययसे बनते हैं। इनका भी संस्कृत-भाषामें बहुत ही उपयोग है। अब इनके कई उदाहरण देते हैं—

त्रुट् (टूटना) = त्रुटित्वा	धृ (धरना) = धृत्वा
त्वर् (त्वरा करना) = त्वरित्वा	नट् (नाचना) नटित्वा
दण्ड् (दण्ड देना) = दण्डयित्वा	नश् (नाश होना) = नाशित्वा, नष्ट्वा
दम् (दमन करना) = दमित्वा	निन्द् (निंदा करना) = निन्दित्वा
दंश् (काटना) = दष्ट्वा	नृत् (नाचना) = नर्तित्वा
दा (देना) = दत्वा	पच (पकाना) = पक्त्वा
दुह् (दोहना) = दुग्ध्वा	पठ् (पढना) = पठित्वा
द्विष् (द्वेष करना) = द्विष्ट्वा	पा (रक्षण करना) = पात्वा
धाव् (दौडना) = धावित्वा	पुष् (पुष्ट करना) = पुष्ट्वा
धा (धारण करना) = हित्वा	पूज् (पूजा करना) = पूजयित्वा
धु (हिलना) = धुत्वा	

इसी प्रकार अन्यान्य धातुओंसे " त्वा " प्रत्यय लगकर रूप बनते हैं।

' य ' प्रत्यय

धातुके पूर्व उपसर्ग रहा तो उस समय " त्वा ' प्रत्ययके स्थानपर 'य' प्रत्यय लगता है, इसका भी वही अर्थ है । इसके उदाहरण देखिये—

अधि — इ = अधीत्य (अध्ययन करके)
नि — यम् = नियम्य (नियमन करके)
प्र — णम् = प्रणम्य (नमन ,,)
वि — तन् = वितत्य (फैला करके)
आ — दा = आदाय (ला ,,)
वि — धा = विधाय (बना ,,)
प्र — हा = प्रहाय (छोड ,,)
आ — क्रम् = आक्रम्य (आक्रमण ,,)
सं–आ—भाष्= समाभाष्य (संभाषण ,,)
सं — चि = संचित्य (इकट्ठा ,,)
सं — चिन्त् = संचिन्त्य (विचार ,,)
प्र — जल्प् = प्रजल्प्य (बोल ,,)
वि — जि = विजित्य (विजय ,,)
वि — ज्ञा = विज्ञाय (जान ,,)

इसी प्रकार उपसर्गपूर्वक धातुओंके रूप होते हैं । इनके प्रयोग संस्कृतमें बहुत हैं । इसलिये पाठक इनका अच्छा अभ्यास करें ।

कृत्य-प्रक्रिया

" तव्य " और " अनीय " ये दो प्रत्यय धातुओंको लगते हैं और ' योग्य ' अर्थ व्यक्त करते हैं, जैसे—

कृ— कर्तव्यं (करने योग्य)
भिद्— भेत्तव्यम्, भेदनीयं (भेदन करने योग्य)
पच्— पक्तव्यं, पचनीयं (पकाने योग्य)

निन्द् — निन्दितव्यं, निंदनीयं (निंदा करने योग्य)
कथ् - कथयितव्यं, कथनीयं (कहने ,,)
चि — चेतव्यं, चयनीयं (इकट्ठा करने ,,)
मृज् — मार्ष्टव्यं, मार्जनीयं (शुद्ध करने ,,)

जिन धातुओंके अंतमें स्वर होता है उस धातुको " य " प्रत्यय इसी अर्थमें लगता है, जैसे—

जि — जेयं (जीतने योग्य)
चि — चेयं (इकट्ठा करने योग्य ,,)
दा — देयं (देने ,,)
धा — धेयं (धारण करने ,,)
गै — गेयं (गाने योग्य)

कई व्यञ्जनान्त धातुओंसे भी यह " य " प्रत्यय होता है, जैसे-

जन् — जन्यं (जन्म देने योग्य)
आलभ् — आलभ्यं (प्राप्त करने योग्य)
चर् — चर्यं (आचरने योग्य)
नियम् -- नियम्यं (नियममें रखने योग्य)

इसी प्रकार अन्यान्य धातुओंसे ये प्रत्यय लगते हैं।

पाठ १०

रामायणम्।

तथा ब्रुवाणं सुग्रीवं लक्ष्मणः प्रहसन्निवाब्रवीत् -- " कस्मिन् कर्मणि कृते सति वालिनो वधं श्रद्दध्याः ? "

सुग्रीव उवाच-- " इमान् सप्त तालवृक्षान् पुरा वाली विव्याध। एवं यः कर्तुं शक्नोति स एव वालिनो वधं कर्तुं समर्थो भविष्यति। "

एतत्सुग्रीवस्य भाषणं श्रुत्वा महातेजा रामस्तस्य प्रत्ययार्थमेकमेव शरं चिक्षेप, स शरः सप्त तालान् भित्त्वा भूमिं प्रविवेश। रामस्य शरवेगेन सुग्रीवः परं विस्मयं गतः कृताञ्जली रामायोवाच- "पुरुषर्षभ! समरे सर्वानपि सुरान्हन्तुं त्वं समर्थोऽसि किं पुनर्वालिनम्? येन त्वया सप्त ताल-वृक्षा गिरिर्भूमिश्च एकेनैव बाणेन विदारितास्तेन त्वया सह को रणे स्थाता? अतस्त्वं वालिनं जहीति।"

ततः सुग्रीवं रामः प्रत्युवाच-"गच्छामेदानीं किष्किंधाम्। अग्रतो गत्वा वालिनं युद्धायाह्वय" इति।

ते सर्वे ततो वालिनः पुरीं किष्किंधां गत्वा वृक्षैरावृत्यातिष्ठन्। सुग्रीवोऽपि वालिन आह्वानकारणात् घोरमनदत्। भ्रातुराह्वानं श्रुत्वा वाली गृहान्निष्पपात। ततो वालिसुग्रीवयोस्तुमुलं युद्धमभूत्। रामस्तु तावत्यन्त-सदृशौ दृष्ट्वा नावगच्छत्सुग्रीवतो वालिनम्। अतोऽन्तकरं शरं मोक्तुं बुद्धिं न कृतवान्। भग्नस्तदा वालिना सुग्रीवोऽपश्यंश्च रामं प्रदुद्रुवे पर्वतमृष्यमूकम्। "शापभयान्मुक्तोऽसि" इति वाली समुक्त्वा स्वगृहं निवृत्तः। रामस्तु तदेव वनं जगाम यत्र सुग्रीवो गतः।

रामं दृष्ट्वा सुग्रीवोऽब्रवीत् किमिदानीं त्वया स्वयं वैरिणा मां घातयित्वा आदौ च समाह्वयस्वेत्युक्त्वा विक्रमं च दर्शयित्वा? इति

रामोऽपि तं सान्त्वयन्निव पुनरब्रवीत्-" त्वं च वाली च वाचा, वर्चसा स्वरेणातिसदृशौ। अतो नावगच्छं कः क इति। अत एव नोत्सृष्टो मया शरः। मित्रस्यैव विघातो भ्रमान्मा भूदिति। दत्ताभयस्य मित्रस्य विनाशस्तु महत्पातकम्। भवांस्तु वने शरणमस्माकं सर्वेषाम्। तस्मात्पुनर्युद्धयस्व मा शंकीः। एकेनैवेषुणा वालिनमद्य मृतं पश्य। स्वमात्मनोऽभिज्ञानार्थं किंचिच्चिह्नं कुरु। लक्ष्मण! अस्य सुग्रीवस्य कण्ठे पुष्पमालां स्थापय।" इति।

लक्ष्मणेन धारितया मालया स सुग्रीवोऽतीव शुशुभे। पुनश्च गत्वा किष्किंधां वालिनं अतिघोरस्वरेणाह्वयत्। शब्दं श्रुत्वा वाली वेगेन रोषाद्-

गृहाक्षिप्यपात । सुग्रीवं च दृष्ट्वाऽब्रवीत् " एष मम बद्धो मुष्टिस्तव प्राणा-
नाशाय एव यास्यति । " इति ।

तेन वालिना रोषादेव ताडितः सुग्रीवो रुधिरं वमन् किंचिन्मूर्च्छित इवाभवत् । सोऽपि सत्वरं संज्ञां प्राप्य सालवृक्षमुत्पाट्य वालिनं सकोपं ताडितवान् । शोणिताक्तौ तौ परस्परं तर्जयानौ अयुध्येताम् । रामस्ततो धनुः संधाय एकेनैव शरेण वालिनं गतसत्त्वं विचेतनं अकरोत् ।

तं मूर्च्छितं गतसत्वं दृष्ट्वा महावीर्यौ भ्रातरौ रामलक्ष्मणौ बहुमान्यं वीरं सुग्रीवमुपयातौ । वाली तु रामं दृष्ट्वा परुषमब्रवीत् । " मम पराङ्मुखवधं कृत्वा त्वया किं यशः प्राप्तम् ? रामः कुलीनस्तेजस्वी दृढव्रतश्चेति सर्वे कथयन्ति । परंतु पापाचारमेवाहं त्वां पश्यामि । अहं तु तव विषये पुरे वा न करोमि किंचिदपि पापम् । नापि त्वामवजाने । कस्मात्त्वमकिल्बिषं मां कांसि ? त्वयाद्य तु धर्मं त्यक्त्वैवाऽहं रणे निहतः । किमर्थमेवमधर्माचरणं भवताचरितम् ? "

शतपथ-बोधामृत

शतपथके बोध-वचनोंका संग्रह मू. ।=) डा. व्य. -)

धर्मशिक्षाके ग्रन्थ

बालक और बालिकाओंकी पाठशालाओंमें तथ घरोंमें बालबच्चोंकी धार्मिक पढाईके लिये ये ग्रन्थ विशेष रीतिसे तैयार किये है।

बालकोंकी धर्म शिक्षा

(१) वैदिक पाठमाला (तृतीय श्रेणीके लिये) मू. ।) डा. व्य.-)

छूत और अछूत

इस पुस्तकमें श्रुति, स्मृति, पुराण, इतिहास, धर्मसूत्र आदिकें प्रमाणोंसे छुताछुतका विचार किया है।

प्रथम भाग मूल्य १) डा. व्य. ।-)

द्वितीय भाग मूल्य १) डा व्य. ।-)

आगम-निबंध-माला

वेद अनंत विद्याओंका समुद्र है। इस वेद-समुद्रका मंथन करनेसे अनेक 'ज्ञानरत्न' प्राप्त होते हैं, इन रत्नोंकी यह माला है।

	मू.	डा. व्य.
१ वैदिक स्वराज्यकी महिमा	।।।)	=)
२ वैदिक सर्पविद्या	।।=)	=)
३ वेदमें चर्खा	।।=)	=)
४ वेदमें लोहेके कारखाने	।।)	-)
५ इंद्रशक्तिका विकास	।।।)	=)
६ वैदिक चिकित्सा	१।।)	।।)

मंत्री- स्वाध्याय-मण्डल, 'आनन्दाश्रम' किल्ला-पारडी (जि. सूरत)

श्रीमद्भगवद्गीता

टीका लेखक- पं० श्रीपाद दामोदर सातवळेकर

इस 'पुरुषार्थबोधिनी' भाषाटीकामें यह बात दर्शायी गयी है कि वेद, उपनिषद् आदि प्राचीन ग्रंथोंकेही सिद्धान्त गीतामें नये ढंगसे किस प्रकार कहे हैं। अतः इस प्राचीन परंपराको बताना इस 'पुरुषार्थ-बोधिनी' टीकाका मुख्य उद्देश्य है, अथवा यही इसकी विशेषता है।

गीता-के १८ अध्याय ३ भागोंमें विभाजित किये हैं और एकही जिल्दमें बांधे हैं। इसका मू. १५) रु. और डाकव्यय १॥) रु. है। लेकिन मनीआर्डरसे १२॥) रु. भेजनेवालोंको हमारे अपने व्ययसे भेज देंगे। प्रत्येक अध्यायका मू० ॥।) और डा० व्यय ।·) है।

श्रीमद्भगवद्गीता-समन्वय।

'वैदिक धर्म' के आकारके १३६ पृष्ठ, चिकना कागज, सजिल्दका मू० २) रु०, डा० व्य० ।=) डा० व्यय सहित मूल्य भेज दीजिये।

भगवद्गीता-श्लोकार्धसूची।

इसमें श्रीगीताके श्लोकार्धोंकी अकारादिक्रमसे आद्याक्षरसूची है और उसी क्रमसे अन्त्याक्षरसूची भी है। मूल्य केवल ।॥·) डा. व्य. ।=)

भगवद्गीता लेखमाला।

'गीता' मासिकके प्रकाशित गीताविषयक लेखोंका यह संग्रह है। इसके १, २, ६, ७ भाग तैयार हैं, जिनका मू. ५) रु. और डा. व्यय १।।) है।

मंत्री-स्वाध्याय-मण्डल, पारडी (जि० सूरत)